Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

मंडी जनपद का प्रसिद्ध नाटी लोकनृत्य एवं नाटी लोकगीत

DR. KALYAN CHAND MANDHOTRA

Associate Professor (Music), Govt. Degree College Drang at Narla, Mandi. Himachal Pradesh

शोध-सार

मण्डी जनपद सांस्कृतिक दृष्टि से जितना समृद्ध है, उतना ही इसका सांगीतिक पक्ष भी सुदृढ़ एवं प्रबल है। इसमें प्रयुक्त गीतों में भावमय अभिव्यक्ति सरल एवं मूलभूत स्वर तथा लय तत्त्वों के कारण हुई है। यहां के लोकसंगीत तथा लोकनृत्यों की सरसता व मधुरता मानों हृदय को आन्दोलित करती है। मण्डी अंचल के अधिकांश लोकनृत्य सामूहिक है। इस क्षेत्र की संस्कृति ने प्राकृतिक दृष्टि से यहां के जन-जीवन को अतीत से आज तक प्रभावित किया है, परन्तु आधुनिकता की अंधी भागदौड़ में युवा वर्ग अपने पारम्परिक लोकनृत्यों तथा लोकगीतों को भूलते जा रहे हैं। मण्डी क्षेत्र लोकसंगीत की दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व बनाए हुए है।

भूमिका

प्राचीन समय से ही लोकसंगीत की समृद्ध परम्परा रही है। लोकसंगीत में जहां एक ओर क्षेत्र विशेष की संस्कृति प्रतिबिम्बित होती है, वहाँ दूसरी ओर इसमें गायन, वादन एवं नृत्य, इन तीनों विधाओं का समन्वित रूप भी परिलक्षित होता है। वास्तव में लोकसंगीत, लोकसंस्कृति का वाहक होता है। लोकसंस्कृति को सुरक्षित रखने में लोकसंगीत की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है तथा रीति-रिवाजों परम्पराओं और व्यवहार के प्रतिमानों को बनाए रखने में इसका महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। मण्डी जनपद सांस्कृतिक दृष्टि से जितना समृद्ध है, उतना ही इसका सांगीतिक पक्ष भी सुदृढ़ एवं प्रबल है। इसमें प्रयुक्त गीतों में भावमय अभिव्यक्ति सरल एवं मूलभूत स्वर तथा लय तत्त्वों के कारण हुई है। यहां के लोकसंगीत तथा लोकनृत्यों की सरसता व मधुरता मानों हृदय को आन्दोलित करती है। मण्डी अंचल के अधिकांश लोकनृत्य सामूहिक है। इस क्षेत्र की संस्कृति ने प्राकृतिक दृष्टि से यहां के जन-जीवन को अतीत से आज तक प्रभावित किया है, परन्तु आधुनिकता की अंधी भागदौड़ में युवा वर्ग अपने पारम्परिक लोकनृत्यों तथा लोकगीतों को भूलते जा रहे हैं। मण्डी क्षेत्र लोकसंगीत की दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व बनाए हुए है।

मण्डी जनपद का लोकसंगीत जन-जीवन का एक अभिन्न अंग है जो यहां के जनजीवन को आज भी प्रभावित किए हुए है। इस संगीत में उस सांस्कृतिक वैभव के दर्शन होते हैं जिसमें भाषा, व्यवहार, रीति-रिवाज, आचार-विचार, रहन-सहन, खान-पान, ज्ञान, कला-कौशल, धर्म, दर्शन, सामाजिक मानस चेतना तथा सौंदर्य-बोध आदि ध्वनित होते हैं।

लोकनृत्य

नृत्य शब्द की व्युत्पति 'नृत' धातु से मानी गई है। 'नृती मात्र विक्षेपे'। इस प्रकार नृत्य का अर्थ हुआ 'मात्र विक्षेपण' अर्थात् पग् हस्तादि अंगों का कलात्मक ढंग से संचानल। 'नृत्य प्राणी मात्र के आन्तरिक उल्लास और चिरंतन की प्रक्रिया है। जब कोई व्यक्ति हर्षातिरेक से आनन्दविभोर होता है, तब स्वतः उसके अंगों में गतिशीलता आ जाती है, और वह अनायास ही नृत्य करने को आतुर हो उठता है।'[1]

नृत्य की उत्पत्ति मानव जीवन के उन क्षणों में हुई, जब वह धरती पर अवतीर्ण हुआ और अपने भावों को व्यक्त करने के लिए सचेत हुआ। भावों को व्यक्त करने की प्रवृति मानव में प्रारम्भ से ही रही है, इस तथ्य को यदि बौद्धिक विकास के सन्दर्भ में देखा जाए तो ज्ञात होता है कि आदि मानव वन - बीहड़ों व कन्दराओं में पशुवत रहता था। भाषा के बोध से

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

वह अनभिज्ञ था, अतः मनोवैज्ञानिक भावाभिव्यक्ति हेतु भिन्न-भिन्न संकेत सूचक अंग प्रत्यंगों का परिचालन किया करता और अत्यधिक प्रसन्नचित होता था तो हाथ पाँव पटक कर उछलता-कूदता, विपरीत क्रोधातुर स्थिति में भी भिन्न-2 चेष्टाओं द्वारा मनोदगारों को अभिव्यक्ति प्रदान करता। अतः प्रारम्भिक नृत्य मानवीय दैनिक अभिव्यक्ति का आधार था। कालान्तर में ज्यों-ज्यों समय बीतता गया आदि मानव सभ्य होता गया तथा उसने सभ्यता तथा संस्कृति का पुट नृत्य कला में भी दिया इसी का परिणाम आज की विभिन्न नृत्यशैलियाँ हैं। वेदों, नाट्यशास्त्र, रामायण, महाभारत, शिवपुराण नंदिकेश्वर कृत मानवीय सभ्यता और संस्कृति का अत्यन्त प्राचीन अंग है, जो समस्त देशों की सभ्य-असभ्य सभी जातियों में अभिनव दर्पण, महापात्र कृत अभिनव चन्द्रिका आदि कई प्राचीन महत्वपूर्ण ग्रन्थों में भी नृत्य का विषद् वर्णन मिलता है। नृत्य सार्वभौमिक आदिम कला है। यह प्रागैतिहासिक काल से विद्यमान रहा है। इससे शरीर स्वस्थ रहता है, और मन को आनन्द प्राप्त होता है। यह व्यक्ति के साथ ही जन-मनरन्जन और सुख प्रदान करने वाली एक महत्वपूर्ण कला है।

ताण्डव नृत्य - वेदों पुराणों एवं भारतीय संस्कृति में ताण्डव नृत्य का वर्णन हुआ है।

''रेचका अड्गहाराश्च पिण्डीबन्धास्त थैव च।।

सृडद्वा भगवता दत्तास्तण्डवे मुनये तदा।

तेनापि हि ततः सम्यग्बान भण्डसमान्वितः।।

नृतप्रयोगः सृडटो यः स ताण्डव इति स्मृतः ।''[2]

इस प्रकार भगवान शिव ने रोचक, अंगहार तथा पिण्डीवन्धों के सृजन कार्य को पूर्ण करने के पश्चात् नृत्य को तण्डु मुनि को प्रदान कर दिया। तब तण्डु मुनि ने गान तथा भाण्डवाद्य (वाद्य तथा गीत) से संयुक्त कर जिस नृत्य प्रयोग की सर्जना की वह ''ताण्डव'' नाम से प्रसिद्ध हुआ। मालविकाग्निमित्रम में डा. रमाशंकर पाण्डेय जी ने लास्य और ताण्डव नृत्य का वर्णन इस प्रकार किया हैः

'' स्त्रीनृत्यं लास्यामित्युक्तं पुनृत्यं ताण्डवं मतम् ।।

अर्थात पार्वती जी के नृत्य को लास्य और शंकर भगवान के नृत्य को ताण्डव कहते हैं।''[3] श्रीमद् वाल्मीकि रामायण में अयोध्या काण्ड में नृत्य का वर्णन मिलता है।

'' सर्वे च तालवचरा गाणिकाश्च् स्वलंकृताः''।।

राम के राज्याभिषेक के अवसर पर तालावचर (नर्तक) तथा गणिकाएं राजभवन की दूसरी डयोढ़ी पर उपस्थित थीं और सम्भवतः नृत्य के लिए वेश्याएं भी बुलाई गई थी।''[4]

''शिव प्रदोष - स्त्रोत के अनुसार जगजननी गौरी को सुवर्णसिंहा - सनारूढ़ कर प्रदोष के समय शूलपाणि शंकर ने नृत्य करने की इच्छा की । इस अवसर पर सभी देवता उपस्थित होकर उनका स्तुतिगान करने लगे। वहाँ लक्ष्मी ने अपना गान प्रस्तुत किया। विष्णु ने मृदंग वादन किया। सरस्वती ने वीणा, इन्द्र ने वेणु तथा ब्रह्मा ने करताल का वादन किया। इस प्रकार उत्पन्न नृत्य समन्वित सांगीतोत्सव के दर्शनार्थ गन्धर्व यक्ष, उरग, पतड्ग, विधाधर, देवता अप्सराएं आदि सभी उपस्थित थे।''[5] संगीत परिजात में भी नृत्य का वर्णन मिलता है यथाः-

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

देवस्य मानवों गानं वाद्य नृत्यनतन्द्रितः

कुर्य्याद्विष्णेः प्रसादार्थमिति शास्त्रे प्रकीर्तितम् ॥ 15 ॥

'मनुष्यों द्वारा गायन, वादन तथा नृत्य तलीनता से किया गया हो, तो वह भगवान विष्णु को प्रसन्न कर देता है, ऐसा ही शास्त्रों में कहा गया है।'[6] नृत्य के प्राचीनतम् अवशेष सिन्धु सभ्यता के अवशेषों में प्राप्त नर्तकियों की मूर्तियों में मिलते हैं। उनके शरीर अलंकृत तथा परिधान रहित हैं, इनके अतिरिक्त दो मूर्तियों तथा मुद्राओं पर नर्तकों के अंकन (चित्र) प्राप्त हुए हैं, जिससे यह स्पष्ट है कि उस समय पुरुष और स्त्रियाँ दोनों नृत्य करते थे। ऋग्वेद में दोनों के नृत्य करने के उल्लेख मिलते हैं। वैदिक काल के पश्चात् नृत्यकला का तेजी से विकास हुआ। पंचगरूक जातक के अनुसार ''बोधिसत्व के राज्याभिषेक के अवसर पर 16000 नर्तकियों ने नृत्य किया।''[7]

ऋग्वेद के अनुसार:-

'' अधि पेशांसि वपते नृतूरिवापोणुति वद उस्रेव वर्जहम ॥

ऋग्वेद में पुरूष और स्त्री दोनों के नृत्य करने के उल्लेख मिलते हैं। नर्तकियाँ मनोरम वस्त्रों के द्वारा अपने शरीर को सजाकर उषा की भान्ति प्रकट होती थीं। नृत्य के समय उनके वक्ष-स्थल अनावृत होते थे।''[8] नृत्य और गान को मोक्ष प्राप्ति का श्रेष्ठतम साधन माना गया है। ''द्वारिका - महात्म्य'' में लिखा हैः

योपृत्यति प्रहष्टात्मा भावैरत्यन्तभक्तितः।

सनिर्द्रहति पापानि जन्मानतर शतैरपि।।

अर्थात - ''जो प्रसन्नचित से, श्रद्धा और भक्तिपूर्वक, भावों सहित नृत्य करते हैं, वे जन्म-जन्मान्तरों के पापों से मुक्त हो जाते हैं।''[9] प्राचीन शास्त्रों में नृत्यसम्बन्धि विवरण से यह आभास होता है कि सामाजिक उन्नति के लिए इसका सर्वत्र ही प्रयोग किया जाता था। भरतनाट्य शास्त्र में नृत्य का विस्तृत विवरण हुआ है। जिसके विकास का प्रयत्न नन्दिकेश्वर, कोहल, दत्तिल, मतंग, अभिनवगुप्त एवं शारंगदेव जैसे आचार्यो ने अपने-2 ग्रन्थों द्वारा किया है।

नृत्य का जन्म शंकर-पार्वती के नृत्य से ही माना गया है। यदि भगवान शिव को संगीत कला का अविष्कारक माना जाए तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। ''ताण्डव नृत्य'' जो भगवान शंकर द्वारा अविष्कृत किया गया, जिसे स्वयं भगवान शंकर किया करते थे, इस नृत्य को पुरुष नृत्य कहा गया है।

पार्वती जी ने जो नृत्य किया उसे ''लास्य नृत्य'' अर्थात् स्त्री नृत्य कहा गया है। इस नृत्य को केवल स्त्रियाँ ही करती हैं। ''नाट्यशास्त्र'' के चतुर्थ अध्याय ''ताण्डव लक्षणम्'' में ताण्डव नृत्य के लक्षणों का वर्णन किया गया है। नृत्य के आयोजन की विधि और ''ताण्डवनृत्य'' के सम्पूर्ण अंगों का विस्तृत विवरण इस अध्याय में किया गया है। शिव और पार्वती के नृत्य से सम्बन्धित चतुर्थ अध्याय के श्लोक 251 में नृत्य के बारे में कहा गया है। ''रेचक तथा अंगहारों से युक्त शिव को नृत्य करते देख पार्वती ने भी सुकुमार प्रयोगों से युक्त एक नृत्य किया।।''[10] अर्थात् शिवजी ने ''ताण्डव नृत्य'' किया और पार्वती जी ने ''लास्यनृत्य'' किया। ''वैदिक काल में गायन-वादन के साथ नृत्यों का प्रदर्शन किया जाता था। वे प्रदर्शन यज्ञों के अवसर पर छोटे-2 मंचों पर और अन्य प्रसंगों पर विस्तृत मैदानों में किये जाते थे। नर्तकी और नर्तक सोमरस का पान कर सामूहिक नृत्य करते थे। नर्तकियां पैरों में घुंघरू बांध कर नाचती थी।''[11]

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

''नृत्य संगीत जैसी कलाएं भावाभिव्यक्ति के लिए प्रायः मनुष्य के शाश्वत भावों को ही अपना आधार बनाती हैं, व्यक्त करती हैं और उजागर करती हैं।''[12] डा. शरदचन्द्र श्रीधर के अनुसारः ''नृत्य कला उतनी ही प्राचीन है जितनी मानव जाति। जब से मानव ने अपने भावों को विभिन्न अंगों द्वारा प्रकट करने का प्रयास किया, तभी से नृत्य कला का सूत्रपात हुआ।''[13]

वास्तव में लोकनृत्यों का जन्म ही लोक से हुआ है। मण्डी अंचल में प्रचलित विभिन्न लोकनृत्य यहाँ के मानव जीवन के प्रत्येक पहलू से जुडे हुए हैं। इन लोकनृत्यों को मात्र देखने से ही यहाँ के जन-जीवन की स्पष्ट झलक सामने आ जाती है। यहाँ प्रचलित लोकनृत्य इतने सहज एवं हृदयग्राहय् हैं कि इन्हें समझने में अधिक बुद्धि अथवा अभ्यास की आवश्यकता नहीं पड़ती, इसी सहजता एवं सरलता के कारण यहाँ के बच्चे भी लोकनृत्यों का अनुसरण जल्दी ही प्रारम्भ कर देते हैं। इन लोकनृत्यों में किसी भी प्रकार के कठोर नियमों का विधान नहीं रहता, अपितु परम्परा का अनुसरण अवश्य रहता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी मस्ती में नृत्य गीतों के बोलों को सुनकर भावों की अभिव्यक्ति करता है, तथा भावों के प्रदर्शन में भी स्वतन्त्रता रहती है। यह आवश्यक नहीं है कि एक नर्तकी की भाव भंगिमाएं एक दूसरे के समान ही हांे, अपितु एक क्रम अवश्य रहता है। यहाँ के विभिन्न लोकनृत्य केवल मनोरंजन के ही साधन नहीं रहें हैं, बल्कि प्राचीन काल से धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के भी अधिष्ठाता रहे हैं। मण्डी अंचल में जितने भी लोकनृत्य प्रचलित हैं, वे यहाँ के लोगों का जाना बुझा नृत्य नहीं है बल्कि ये लोग दिन के कार्यकलापों से जब थक जाते हैं तो अपनी थकावट को भलाने हेतु लोकनृत्यों का सहारा लेते हैं। लोकनृत्यों का जन्म वास्तव में किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा नहीं किया जाता बल्कि ये नृत्य अपने आप ही निर्मित हुए ज्ञात होते हैं। इन लोकनृत्यों से प्राप्त आनन्द चर्मोत्कर्षाभिव्यक्ति का नाम हीं लोकनृत्य है।

लोक अर्थ एवं परिभाषा

'लोक शब्द' संस्कृत के 'लोकदर्शने' धातु से 'घ्' प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है।'[14] इस धातु का अर्थ 'देखना' होता है। जिसका लट् लकार में अन्य पुरुष एक वचन का रूप 'लोकते' है। लोक शब्द का अर्थ देखने वाला है। इस प्रकार वह समस्त जन-समुदाय जो इस कार्य को करता है 'लोक' कहलाएगा। लोक शब्द अत्यन्त प्राचीन है। साधारण जनता के अर्थ में इसका प्रयोग ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऋग्वेद में 'लोक' शब्द के लिए 'जन' का भी प्रयोग होता है।[15]

डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि 'लोक' शब्द का अर्थ 'जनपद' या 'ग्राम्य' नहीं है बल्कि नगरों और गाँव में फैली हुई वह समूची जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं हैं। ये नगर में परिष्कृत, सुसंस्कृत समझने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उत्पन्न करते हैं।[16] अतः 'लोक' साधारण जन समाज है, जिसमें भू-भाग पर फैले हुए समस्त प्रकार के मानव सम्मिलित हैं। समाज में नागरिक और ग्रामीण दो भिन्न संस्कृतियों का प्रायः उल्लेख किया जाता है पर 'लोक' दोनों में विद्यमान है।[17]

'लोक' हमारे जीवन का महासमुद्र है, उसमें भूत, भविष्य तथा वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक राष्ट्र का अमर स्वरुप है। लोक कृत्स्ना ज्ञान और सम्पूर्ण अध्ययन में सब शास्त्रों का पर्यवसान है।''[18]

डा. कृष्ण देव उपाध्याय के अनुसार 'लोक' शब्द की परिभाषा इस प्रकार हैः-

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

''आधुनिक सभ्यता से दूर, अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली आशिक्षित एवं असंस्कृत जनता को 'लोक' कहते हैं। जिनका आचार-विचार एवं जीवन परम्परा युक्त नियमों से नियंत्रित होता है। इससे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि जो लोग सुसंस्कृत और परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान हैं उन्हें लोक की संज्ञा प्राप्त है।''[19] अतः लोक का अर्थ हुआ 'पहचान करने वाला' वह सारा जन समुदाय जो इस कार्य को सम्पूर्ण करता है, 'लोक' कहलाता है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'लोक' शब्द का प्रयोग, प्राचीन ग्रन्थों की भाँति विभिन्न अर्थों के रूप में हुआ है। आधुनिक परिवेश में लोक शब्द का प्रयोग, सामान्यतः सामान्य जनता, समाज, भू-भाग, पृथ्वी, जनसमूह व क्षेत्र विशेष से किया जाता है। प्राचीन शास्त्रकारों की भाँति आधुनिक विद्वानों ने भी लोक शब्द के विभिन्न अर्थ बताए हैं। मुकन्द लाल श्रीवास्तव के अनुसार 'लोक' शब्द का अर्थ सामान्य जनता, भू-भाग तथा प्रजा आदि है।[20] डा. कृष्ण देव उपाध्याय लिखते हैं कि ''जो लोग संस्कृति या परिष्कृत वर्ग से प्रभावित न होकर अपनी पुरातन स्थितियों में रहते हैं, वे लोक कहलाते हैं।''[21] वास्तव में लोक शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है 'लोक' के अन्तर्गत पृथ्वी, पृथ्वी पर निवास करने वाले सभी प्राणी आ जाते हैं।

पूर्णिमा श्रीवास्तव के अनुसार ''हमारा ग्रामीण समाज लोक का महाप्राण है और ग्रामीण संस्कृति लोक का प्रतिनिधित्व सा करती हुई दिखाई देती है। एक विश्लेषण के रूप में इस शब्द का अर्थ ग्राम्य या जनपदीय समझा जाता है।''[22] वैसे लोक शब्द ऐसे स्थान की ओर भी ईंगित करता है जहाँ विशेष प्रकार के असभ्य तथा अशिक्षित प्राणी निवास करते हैं। जीव लोक के अन्तर्गत संसार के सभी प्राणी आ जाते हैं जो पृथ्वी पर पारम्परिक अवस्था में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। देव लोक में देवताओं का वह स्थान जहाँ देवता निवास करते हैं, इसे भी अलग लोक की संज्ञा दी जा सकती है। 'मनुष्य लोक' के अन्तर्गत जहाँ मनुष्य जाति निवास करती है आदि। डा. श्री राम शर्मा के अनुसार - 'लोक' शब्द अशिक्षित, अर्धशिक्षित, अर्धसभ्य तथा असभ्य वर्ग के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए। चाहे वे ग्रामीण क्षेत्र में निवास करते हों या नगरीय क्षेत्र में।[23]

उक्त सभी विद्वानों ने 'लोक' शब्द को भिन्न-भिन्न रूपों में परिभाषित किया है तथा जन मानस को 'लोक' के अन्तर्गत माना है जो साक्षरता, सभ्यता कृत्रिमता परिष्कार तथा बनावट इत्यादि से अछुता हुआ सामुदायिक मनोवृतियों के अवशेषों से परिपूर्ण है। कहने का तात्पर्य है कि लोक शब्द का प्रयोग साक्षेप है। प्राचीन काल से चले आ रहे सामाजिक , सांस्कृतिक, धार्मिक संस्कारों, लोक विश्वासों, लोक व्यवहार रीति-रिवाजों, प्रथा प्रचलनों शकुन-अपशकुन, देवी-देवताओं के प्रति ये लोग आस्थाशील होते हैं।

उपरोक्त सभी प्रसंग मण्डी अंचल के लोक मानस पर व्यापक रूप से ठीक बैठते हैं। यहाँ का स्थानीय ''लोक'' प्राकृतिक रूप-लावण्य से पूर्णतया सम्पृक्त है। यहाँ पर प्रायः हर जाति एवं व्यवसाय के लोग बसे मिलते हैं। ये लोग अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति पारस्परिक सहयोग भावना से करते हैं। यहाँ के लोग स्वभाव में सरल, मृदु-भाषी , हास्य-विनोदी तथा निश्छलता से दूर हैं। अतः 'लोक' शब्द वास्तव में गाँव के जन-जीवन की स्पन्दनों का यथार्थ प्रतिबिम्ब है। मण्डी अंचल की आधुनिक स्थिति को देखते हुए उपर्युक्त लोक शब्द का सम्बन्ध गाँव व देहातों में वास करने वाले उस समुदाय से जोड़ना अधिक उपयुक्त होगा जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बहार कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में निवास करते हैं तथा जिनका व्यावहारिक ज्ञान पुस्तकों पर आधारित न होकर परम्परा द्वारा प्रतिष्ठित है।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

लोकनृत्य की परिभाषा एवं उत्पति

जब मनुष्य अति प्रसन्न होकर अपनी प्रसन्नता को प्रकट करने के लिए अपने अंग-प्रत्यंगों को हिला-हिला कर झूमने लगता है तो उस स्थिति को नृत्य की संज्ञा दी जा सकती है। लोक में प्रचलित लोकनृत्यों को लोकनृत्य कहा जाता है। लोकनृत्य का एकमात्र उद्देश्य अपनी हार्दिक प्रसन्नता को प्रकट करना है। डा. सत्येन्द्र के अनुसार ''लोकनृत्य मनुष्य की सम्पूर्ण समग्र अभिव्यक्ति है। नख से शिख तक के अवयव इसमें मिलते हैं।''[24] यहाँ प्रचलित लोकनृत्यों में यहां के लोगों का आचार-व्यवहार, आदान-प्रदान चरित्र आदि सभी बातों का व्याख्यान मिलता है।

नृत्य की उत्पति में प्राकृतिक वातावरण का विशेष योगदान रहा है। यदि यह कहा जाए कि प्रकृति से आदि मानव ने नृत्य कला सीखी तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। प्राकृतिक माध्यम द्वारा नृत्य की प्रेरणा मिलने से सम्बन्धित मृदुला बिहारी ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है कि लोकनृत्य की परम्परा का प्रयोग मानव ने प्रकृति की प्रेरणा से अनजाने में अपनी कलात्मक प्रवृतियों के प्रकाशन के लिए किया होगा। ''भाषा के अभाव में मन के भावों को व्यक्त करने के लिए उसने अपने अभिनय का सहारा लिया होगा और अभिनय से ही अंग परिचालन और भावाभिव्यक्ति की परिपाटी बन गई होगी।''[25] इस सम्बन्ध में डा. यादवेन्द्र शर्मा का कहना है कि ''प्राकृतिक सम्पदा के सौन्दर्य आकर्षण से मुग्ध होकर मानव के हृदय में थिरकने की इच्छा हुई और समय की गति के साथ सुर और ताल के माध्यम से मानव के पाँव नृत्य करने लगे तथा भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम नृत्य बना।''[26]

मण्डी अंचल के लोकनृत्यों से सम्बन्धित जानकारी शोधार्थी को रियासती काल तक की ही प्राप्त हो सकी है। इससे पूर्व यहां प्रचलित लोकनृत्यों के विषय में कोई प्रामाणिक साहित्य उपलब्ध नहीं है। रियासती काल में यहां के जनपदों में विभिन्न प्रकार के लोकनृत्यों का उल्लेख मिलता है तथा लोकनृत्यों को राजकीय संरक्षण भी प्राप्त था। 765 ई. में राजा 'वीरसेन' द्वारा ''लोकनृत्यों के प्रचार एवं प्रसार हेतु विशेष आचार सहिंताएं बनाई गई थीं तथा विशेष परिधान निश्चित किया गया था।''[27] रियासती काल तक मंडी अंचल की लोकनृत्य शैलियों को राजकीय संरक्षण प्राप्त होने के फलस्वरूप खूब प्रचारित, प्रसारित एवं प्रदर्शित किया गया तथा इसी कारण स्थानीय लोक नर्तकों व नर्तकियों को भी बहुत प्रोत्साहन मिला। मण्डी अंचल में प्रचलित लोकनृत्यों से सम्बन्धित जानकारी यहां के बेडा नामक समुदाय के वृद्ध कलाकारों से प्राप्त हुई है।

वर्तमान समय में मण्डी अंचल में लगभग सभी समुदायों एवं वर्गों द्वारा लोकनृत्य किया जाता है। लोकनृत्य उत्सव, पर्व, विवाहादि पावन संस्कार, सामाजिक चेतना एवं मानव के अटूट सम्बन्ध के परिचायक होते हैं। इन लोकनृत्यों में यहां के लोक जीवन के स्वभाव, अंग संचालन में एक आकस्मिकता, कठोर मुद्रा से परिपूर्ण नृत्यों का अविकल रूप तथा धार्मिक, सामाजिक संस्कारों की छाप मिलती है।

लोकनृत्यों का लोक जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। मांगलिक कार्यों जैसे पवित्र संस्कारों के समय लोकनृत्यों को किया जाता है। लोकनृत्यों की उत्पत्ति विशेषकर गांव में ही होती है। ''लोकनृत्यों में नर्तकों की थिरकन, ठुमकने या झूम-झूम कर नाचने में प्रचलित जो उमंग और खुशी झरती है, वह अपने आप में अद्वितीय है।''[28]

श्शारीरिक लय प्रधान क्रियाओं के साथ आनन्द एवं सौन्दर्य की अभिव्यक्ति जिस सामुहिक रूप से होती है, उसे लोकनृत्य कहते हैं। लोकनृत्यों का मूल स्त्रोत हमारी लोक संस्कृति है। जिसे स्थान और काल की दूरी छिन्न-भिन्न नहीं कर सकती। लोकनृत्य परस्पर प्रेम का अंकुर उभारते हैं।[29]

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

लोकनृत्य सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक परम्पराओं को प्रकट करते हैं। मानव की गहरी अनुभूति भरी उल्लासमयी लहरों का साकार रूप लोकनृत्यों में देखने को मिलता है। लोकनृत्य लोक कला को आनन्दमय बनाकर लोक संस्कृति को सुरक्षित रखते हैं।

मण्डी जनपद में प्रचलित लोकनृत्य भी धार्मिक परम्पराओं और कलात्मक गुणों का सुन्दर सामजस्य प्रस्तुत करते हैं। पहाड़ी लोकनृत्यों में जहां उनके लयात्मक गुणों और सौम्य स्वभाव के कारण आकर्षण है, वहां उनमें प्रयुक्त बहुरंगी वस्त्राभूषण और सज्जा परिधानों ने इनके बाह्य कलेवर को अति कलात्मक और दैवी बना दिया है। यहां प्रत्येक क्षेत्र के नृत्य के लिए अपना अलग परिधान है जिससे प्रत्येक स्थान विशेष के साथ लोकनृत्य को पहचाना जा सकता है।

''लोकनृत्य सभी कलाओं में अति प्राचीन हैं। लोकनृत्य लोक कला का ही विशिष्ट रूप है, जिसमें ललित कलाओं के अनेक रूप समाए हुए हैं। लोकनृत्य एवं लोक संगीत का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। नृत्य और संगीत विश्व की आदिम कलायें है।''[30] मण्डी जनपद में प्रचलित लोकनृत्यों में प्रयुक्त लोकगीतों का भी यहां की मानव संस्कृति से घनिष्ट सम्बन्ध है। यहां के नृत्य गीत भी उतने ही प्राचीन हैं जितनी कि यहां की संस्कृति ।

लोक जीवन की प्रत्येक दिशा नृत्य में व्याप्त है। प्रातः काल सूर्य नृत्य करता हुआ निकलता है। हवा के बबंडर भी यदा-कदा नाच उठते हैं। घर के बाहर और छतों पर मयूर नृत्य करता है। सांप , बन्दर और भालू भी संगीत की मधुर स्वर लहरियों में नृत्य करते हैं। निर्जीव पदार्थों तक में नृत्य देखने में आता है। ''लोकजीवन में कठपुतलियां नाचती हैं। ये सभी प्रकार के नृत्य, लोकनृत्यों के अन्तर्गत आते हैं। लोकनृत्य जीवन की आत्मानुभूति है।''[31]

अतः मण्डी अंचल के लोकनृत्यों में प्रयुक्त लोकगीतों तथा लोकवाद्यों के सांगीतिक अध्ययन को विभिन्न शोध प्रणालियों द्वारा पूरा किया गया है इन सभी माध्यमों के अध्ययन द्वारा शोध विषय से सम्बन्धित साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन के उद्देश्यों का प्रतिपादन कर बुनियादी मान्यताओं का विवरण दिया गया है। वास्तव में मण्डी अंचल के लोकनृत्य, लोक जीवन की गति से सम्बन्धित हैं। यहाँ के लोकनृत्य किसी आदर्श अथवा प्राणानुभूति को व्यक्त न कर जीवन के उल्लास को भी व्यक्त करते हैं। यही कारण है कि वे इस क्षेत्र के जीवन की गति के आदर्श प्रतीक हैं। इन्हीं लोकनृत्यों ने आत्मसमप्रण कर शास्त्रीय नृत्य को जीवन देकर हमारी कला को सुरक्षित रखा है तथा जीवन को सुसंस्कृत कर दिया है।

लोकनृत्यों का विकास

विश्व का कोई भी भाग ऐसा नहीं है जहां लोकनृत्यों का प्रचलन न हो। जिस तरह मात्र छः कि.मी. की दूरी के अन्तर पर भाषा, बोली एवं संस्कृति बदल जाती है उसी प्रकार लोकनृत्यों में प्रयुक्त लोकगीतों में भी परिवर्तन आ जाता है। किन्तु उल्लास और उमंग की अभिव्यक्ति सभी लोकनृत्यों में समान रूप से होती है।

लोकनृत्य लोकपरक मनोरंजन विधा है। लोक-कला की भान्ति यह भी स्वच्छंद तथा परम्परा प्रवाहित है। देश-काल पात्र आदि के आधार पर इनके कई रूप प्रचलित हैं। लोकनृत्यों में जनमानस की ऐतिहासिक एवं सामाजिक परम्परा तथा विकास के दर्शन होते हैं। जनजातीय जीवन तथा बर्फीले पहाड़ों के तो ये प्रमुख अंग हैं। इनके अभावग्रस्त एवं कटुजीवन को संगीत तथा नृत्य ही सरस, सुखद तथा मस्त बनाते हैं। नृत्य इनकी सहनशीलता, आमोद-प्रमोद तथा विनोदी प्रवृति के प्रतीक हैं। मण्डी अंचल नृत्यों की धरती है इसके नृत्य मनोरंजन प्रधान हैं। यहां के उत्सव मेले तथा संस्कार समूह नृत्यों

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

तथा लोकगीतों से सम्पन्न होते हैं। इन नृत्यों में स्थानीय इतिहास, सांस्कृतिक परम्पराएं एवं लौकिक मान्यताएं प्रतिबिम्बित मिलती हैं।

''हिमाचल प्रदेश के सम्पूर्ण भाग में लोकनृत्य प्रचलित हैं। हिमाचल के लोकनृत्य सरल, स्वाभाविक, विविध व मनोहारी हैं। धार्मिक भावनाओं से अनुप्रणित और कलात्मक गुणों से अंलकृत मण्डी अंचल के लोकनृत्य अत्यन्त मनोहारी हैं। यहाँ के अधिकांश नृत्य सामुहिक हैं।''[32] इन नृत्यों में आकर्षक लय के अतिरिक्त, नर्तक दल का माला में बन्धने का एक विशेष ढंग तथा पग व अंग संचालन का निश्चित क्रम अदभुत आकर्षण पैदा करता है। यहां प्रचलित लोकनृत्य सिखाए नहीं जाते बल्कि आने वाली नई पीढ़ी नृत्यों को देखकर ही अनुसरण करना प्रारम्भ कर देती है। मण्डी अंचल के लोकनृत्यों तथा लोकगीतों के विकास में मेलों और उत्सवों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रत्येक उत्सवों में लोकनृत्यों को देखा जा सकता है। यहां का शिवरात्री उत्सव अन्तर्राष्ट्रीय उत्सव बन चुका है। इस मेले में मण्डी जनपद के प्रत्येक लोकनृत्य देखने को मिलते हैं। इन लोकनृत्यों में प्रयुक्त लोकगीतों का अपना एक अलग महत्त्व है।

इन नृत्यों के माध्यम से मानवीय मनोभावों की अभिव्यक्ति जिस प्रकार प्राप्य है उतनी दूसरी जगह शायद ही सुलभ हो। इस क्षेत्र की संस्कृति ने प्राकृतिक दृष्टि से यहां के जन जीवन को अतीत से आज तक प्रभावित किया है। मंडियाली लोकनृत्य का उद्भव भी सामाजिक परिस्थिति की प्रतिक्रिया का परिणाम है। यही कारण है कि इन नृत्यों में मैदानी भागों के नृत्यों की चंचलता तथा उच्छृंखलता का समावेश है, वहां इनमें पर्वतीय क्षेत्रों के लोकनृत्यों की कोमल लास्यपूर्ण उल्लासित भावनाओं के दर्शन भी होते हैं। राजा वीरसेन के शासनकाल में मंडियाली लोकनृत्यों को राजकीय संरक्षण मिलना आरम्भ हुआ। अतः रियासती काल से मंडियाली लोकनृत्य विकास की ओर अग्रसर हुआ। ''बांठड़ा'' लोकनाट्य की परम्परा ने इन नृत्यों के विकास प्रचार तथा प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। रियासती युग में ''बाठंडा'' लोकनाट्य के माध्यम से लोकानुरंजन लोक कलाओं का प्रसार तथा शिक्षा का प्रचार किया जाता था। इसमें भाग लेने वाले प्रत्येक कलाकार को मंच-प्रवेश के समय तथा वापिस साज श्रृंगार कक्ष जाते हुए नृत्य की विशेष मुद्राओं के साथ आना-जाना पड़ता था जो अनिवार्य माना जाता था, तथा नृत्य की दृष्टि से निजी महत्त्व रखता था। उपर्युक्त वर्णन से यही निष्कर्ष निकलता है कि नृत्य कला का इतिहास उतना ही पुराना माना जा सकता है जितना कि मानव जाति, अर्थात् मानव और नृत्य का जन्मजात सम्बन्ध रहा है।

लोकनृत्यों की परम्पराएं

लोकनृत्यों की परम्परा भारत वर्ष में अत्यन्त प्राचीन है। भारतीय नृत्य का प्रारम्भिक रूप विश्व के प्राचीनतम वांड्मय वेदों में मिलता है 'यजुर्वेद' में सोमयाग के समय नृत्य का स्पष्ट वर्णन मिलता है। 'ऋग्वेद' में तो नृत्य का पूरा पिट पाक हुआ है, क्योंकि ऋग्वेद में वरुण, इन्द्र मारूति आदि प्राकृतिक देवताओं की पूजा नृत्य से आरम्भ होती है, वैदिक मंत्रों का उच्चारण भी अंग-संचालन के साथ होता है। इस तरह 'ऋग्वेद में नृत्य करती हुई एवं धूल उड़ाती हुई नर्तकियों का विशद् वर्णन मिलता है। वाल्मीकि रामायण में राम जन्म के शुभ अवसर पर गन्धर्वों द्वारा गायन और अप्सराओं द्वारा नृत्य करने का उल्लेख मिलता है। मोहन जोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में प्राप्त नृत्य करती हुई, नारी प्रतिमाओं एवं नर्तकियों के आधार पर यह प्रमाणित हो चुका है कि भारतीय नृत्य का जन्म कम से कम ईसवी सन् के छः-सौ वर्ष पूर्व हो चुका था, इस तरह वैदिक युग में कलाकारों को कला के सौन्दर्य को मुद्राओं द्वारा उभारने का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो चुका था। दंत कथा के अनुसार त्रिपुरासुर का वध करने के लिए भगवान शंकर ने वीर रस प्रधान नृत्य किया और जब राक्षस का वध हो गया

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

तो उसके हर्ष में पार्वती ने लास्य नृत्य किया। ताण्डव नृत्य पुरुषों के लिए उपयुक्त है, क्योंकि उसमें कुछ ऐसे अंगहारों का प्रदर्शन किया जाता है जो स्त्री द्वारा किये जाने पर असौन्दर्यपूर्ण प्रतीत होता है। ''स्त्री श्रृंगार और कोमलता की प्रतीक है। इस लिए उसके द्वारा केवल लास्य नृत्य का प्रदर्शन ही लोकरंजक होता है।''[33]

''संगीत रत्नाकर में जगजननी पार्वती ने वाणासुर की कन्या उषा को लास्य नृत्य की शिक्षा दी, उषा का विवाह अनिरूद्ध से हुआ। उषा ने द्वारिका की महिलाओं को लास्य नृत्य की शिक्षा दी, उन लोगों ने सौराष्ट्र की महिलाओं को सिखाया, वहां से विभिन्न जनपदों की नारियों में लास्य नृत्य का प्रचार एवं प्रसार हुआ। फलतः लास्य लोक में प्रतिष्ठित हो गया। उक्त मत शैव मत में प्रचलित है।''[34]

मानव भावनाशील प्राणी है तथा उसके मनोभाव अभिव्यक्ति का मार्ग ढूंढते हैं और इसी कारणवश अनेकों नृत्यकलाएं व शैलियां जन्म लेती हैं, यही अनेक नृत्य कलाएं एवं शैलियां जब एक परिवार, वर्ग अथवा समुदाय द्वारा अपना ली जाती हैं तथा परम्परानुसार सामयिक संशोधनों व परिवर्तनों के साथ-साथ दोहराई जाती हैं तब वह उस वर्ग समुदाय, जाति अथवा समुदाय की परम्परागत नृत्य शैलियों का रूप धारण कर लेती है। ऐसी ही स्थिति मण्डी अंचल में प्रचलित विभिन्न लोकनृत्यों की शैलियों में भी परिलक्षित होती है। मण्डी अंचल के युवक-युवतियां, छोटे-2 बच्चे, नौजवान तथा वृद्ध भी नृत्यों को देख कर आनन्दित हो उठते हैं तथा परिपक्व लोक नर्तकों के नृत्यों का अनुसरण करना प्रारम्भ कर देते हैं। कालान्तर में छोटे-2 कलाकार भी उच्चकोटि के नर्तक बन कर यहाँ के पारम्परिक नृत्य कला के संरक्षक बन जाते हैं। लोकनृत्यों में जहां एक ओर आदिकालीन असभ्य एवं अपरिपक्व लोगों के आधारभूत तत्त्वों को स्थापित किया गया, वहां भाषा तथा संस्कृति के साथ-साथ इसका परिष्कृत रूप भी उभरने लगा। मध्यकाल में मंडी अंचल के लोकनृत्यों का स्वतन्त्र स्वरूप स्थापित हुआ। मण्डी में पंजाब राजस्थान, कुल्लू तथा लाहौल-स्पिति से आये लोग यहां बस गये, जिससे यहां ऐसे लोकनृत्यों का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने विभिन्न प्रदेशों के सांस्कृतिक स्वरूपों को भी अंगीकार किया यही कारण है कि जहां इन नृत्यों में मैदानी भागों के नृत्यों की चंचलता तथा उच्छृंखलता का समावेश हुआ है। वहां इनमें पर्वतीय क्षेत्रों के लोकनृत्य की कोमल लास्यपूर्ण तथा उल्लासित भावनाओं के दर्शन भी मिलते हैं।[35]

मण्डी अंचल में प्रत्येक स्त्री-पुरुष तथा बच्चों को नृत्य से विशेष लगाव है। नृत्य में अनेक इच्छुक स्त्री-पुरुष तथा बच्चे बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं। मेले उत्सवों, त्योहारों तथा अनेक संस्कारों में अनेक प्रकार के लोकनृत्य किये जाते हैं। यहां के जनपदों में विशेषतया जनजातीय क्षेत्रों में लोकनृत्य का प्रचलन अन्य शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक है। इसका मुख्य कारण यह है कि लोकनृत्य इन जनपदों के लोगों का प्रमुख अंग है। इन लोगों के कोई भी धार्मिक संस्कार, मेले पर्व त्योहार तथा समारोह तब तक सम्पूर्ण नहीं समझे जाते जब तक इनमें नृत्य का आयोजन न किया गया हो। संस्कृति, साहित्य, सामाजिक तथा धार्मिक स्थिति आदि का सुन्दर परिचय इन लोकनृत्यों में मिलता है। इन लोकनृत्यों में यहां के समाज का नख से शिख तक का वर्णन बड़े ही सुन्दर शब्दों में मिलता है।

लोकनृत्यों का सांगीतिक महत्त्व एवं विशेषताएं

मण्डी अंचल में प्रचलित लोकनृत्यों के साथ लोकगीतों की संगति इन लोकनृत्यों को अधिक आर्कषक बनाती है। निःसन्देह लोकनृत्य और लोकगीत का जन्म साथ-साथ संघर्ष और श्रम साधनों के अवसर पर दिखाई जाने वाली भावमयी मुद्राओं के उन चरणों में हुआ, जब जीवन का सौन्दर्य जाग उठा और गीत फूट पड़े। चिरकाल के समान उदय और प्रयोजन के कारण, मण्डी अंचल के लोकनृत्य और लोकगीत अभिन्न रहे हैं, और पर्वतीय सामाजिक जीवन को

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

सचित्र सजीव और प्रेरित करते हुए लोकनृत्यों से विभूषित हैं। इनका सरल प्रवाहमान संगीत , नृत्य की ताल लय को कला सौष्ठव प्रदान करता है और दर्शक की आत्मा मन्त्रमुग्ध सी आलौकिक आनन्द का रसास्वादन करने लगती है।

मण्डी अंचल के लोकनृत्यों में प्रयुक्त लय और स्वर संगति में लोकवाद्यों की अहम् भूमिका रहती है। लोकनृत्यों के लिए ताल वाद्यों का होना परमावश्यक होता है। लोकनृत्यों में लोकवाद्यों तथा लोकगीतों की आवश्यकता समान रूप से होती है। नृत्य का प्राण ही ताल है। प्रथम लोकवाद्यों द्वारा लोकनृत्यों में प्रयुक्त लोकगीतों की संगत की जाती है, अर्थात लोकवाद्य यंत्रों पर लोकधुनें बजाई जाती हैं। जिनके आधार पर लोकनृत्य किया जाता है। इसी कारण मण्डी अंचल में प्रचलित लोकनृत्यों में लयात्मकता का पुट अधिक दिखाई देता है। यहां के जनपद में नर्तक हो या गायक कलाकार दोनों ही नृत्य को प्रस्तुत करते समय एकाग्रता से नृत्य करते व लोकगीत गाते हैं। यहां के लोकनृत्य एक योजनाबद्ध ढंग से प्रस्तुत किये जाते हैं। इन लोकनृत्यों की एक मुख्य विशेषता यह है कि इन पारम्परिक लोकनृत्यों को देख कर किसी भी अपरिचित व्यक्ति का मन नाच उठने को कर जाता है। इस प्रकार इन लोकनृत्यों में किसी भी व्यक्ति को आकृष्ट करने का विशेष गुण है। यहां के नृत्य लोकगीतों में अधिकतर हर्षोल्लास की अभिव्यक्ति अधिक रहती है। इन लोकगीतों में शास्त्रीय नृत्यों की भांति विभिन्न नियमों का पालन नहीं किया जाता है, लेकिन इतना अवश्य है कि लोक नर्तक एवं नर्तकियां नृत्यगीतों के बोलों को सुनकर शारीरिक भाव भंगिमाऐं प्रदर्शित करतें हैं। यहां के लोकनृत्य सरल एवं साधारण हैं। मेलों और उत्सवों में जिस उत्साह से लोकवाद्यों की लय पर लोकनृत्य किये जाते हैं, उसी उत्साह से विवाह शादियों में लोकवाद्यों के सुरतालों पर बाराती नृत्य कर झूमते हैं। इस जनपद में प्राचीनकाल से आनन्द और उत्साह में नृत्यों का संचालन लोकवाद्य ही कराते आये हैं। लोकवाद्य ही लोकनृत्यों में लय एवं स्वर को नियंत्रित रखते हैं, संगीत को आकर्षक बनाते है तथा नर्तकों की पद्वति को सुव्यवस्थित करते हैं।

नाटी लोकनृत्य एंव नाटी लोकगीत

नाटी लोकनृत्य मण्डी अंचल में सबसे अधिक लोकप्रिय नृत्य है। यह लोकनृत्य मण्डी जनपद में मनाये जाने वाले प्रत्येक मेलों, त्योहारों तथा विवाह आदि उत्सवों में अवश्य देखने को मिलता है। यहां के प्रत्येक क्षेत्र के मेलों, उत्सवों तथा त्योहारों का मुख्य आकर्षण ही नाटी लोकनृत्य होता है। नाटी शब्द ‘‘नट‘‘ अथवा नटी से बना प्रतीत होता है। जिसका सम्बन्ध नाट्य से है। शायद इसी नट शब्द से ही नाटी नाम पड़ा हो। यह नाट्य शब्द भरत मुनि के नाट्य शास्त्र में नाट्य रूप के अधिक निकट ठीक से बैठता है क्योंकि संगीत शास्त्र के विद्वानों ने नाट्य में गायन, वादन, नृत्य तथा अभिनय आदि सभी विधाओं की अभिव्यक्ति का होना आवश्यक माना है। यही विधायें नाटी लोकनृत्य में पूर्ण रूप से विद्यमान है। हिमाचल के पूर्वोतर ऊँचाई वाले क्षेत्रों में प्रारम्भ से ही नाटी लोकनृत्य गीतों का प्रचलन रहा है। जिनमें नृत्य विधा को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यह लोकनृत्य कुल्लू तथा शिमला आदि क्षेत्रों में आज भी लोकप्रिय है। मण्डी अंचल की सीमायें ज़िला कुल्लू तथा शिमला से लगती है। इसी कारण यहां प्रचलित नाटी लोकनृत्य में कुल्लू तथा शिमला का प्रभाव परिलक्षित होता है। नाटी लोकनृत्य में समस्त पात्रों को संगठित होकर आवश्यक रूप में यह नृत्य करना होता है। जिसके परिणाम स्वरूप यह नृत्य नाटी नाम से लोकप्रिय हुआ मालूम पड़ता है। ’’नाटी’’ पर्वतीय लोगों की अमूल्य सांस्कृतिक लोकनिधि है जो लोगों द्वारा परम्परागत रूप से आज भी सुरक्षित है। मण्डी जनपद के जंजैहली, चच्योट, करसोग, चैहारघाटी, बरोट तथा जोगिन्द्रनगर आदि क्षेत्रों में नाटी लोकनृत्य सर्वाधिक लोकप्रिय है। ये क्षेत्र बहुत ऊँचे तथा दुर्गम हैं। वास्तव में नाटी लोकनृत्य मेहनतकश लोगों का भावपूर्ण तथा गतिशील नृत्य है जो प्राचीन काल से परम्परागत रूप से चला आ रहा है।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

इस लोकनृत्य का सम्बन्ध करसोग, पांगणा, ततापनी, सिराज क्षेत्र, बरोट, कटोला, शिवाबदार, जोगिन्द्रनगर तथा चैहारघाटी आदि प्रमुख स्थानों के गद्दी गुज्जर तथा घुमकक्ड़ लोगों से है। यह लोकनृत्य अधिकतर सामूहिक रूप से किया जाता है। इसे प्रायः स्त्री-पुरुष मिलकर करते हैं। परन्तु कई बार नाटी लोकनृत्य अकेले पुरुषों तथा अकेले स्त्रियों द्वारा भी किया जाता है। इस लोकनृत्य में नर्तकों की वेषभूषा परम्परागत एवं साधारण होती है। पुरुषों का परिधान पायजामा तथा ऊनी चोला होता है। सिर पर पहाड़ी टोपी जिसमें कलगी लगायी जाती है। स्त्री परिधान में पट्टू तथा ढाठू उल्लेखनीय है। स्त्रियां परम्परागत आभूषण जैसे चांदी का हार तथा कलाई में चूडियां पहनती हैं। नाटी लोकनृत्य करने वाले स्त्री-पुरुष एक दूसरे का हाथ पकड़ कर कदम से कदम मिलाकर लोकगीतों की लय और ताल के साथ नृत्य करते हुए एक वृत में घूमते हैं। जब नर्तकों तथा नर्तकियों के हाथ पांव एक साथ ही आगे-पीछे हिलते हैं तो यह दृश्य बहुत ही लुभावना और मनमोहक लगता है। इस लोकनृत्य में जो सबसे आगे वाला नर्तक होता है, उसे ही आर्दश माना जाता है।

लोकगीत, कदम तथा मुद्रा परिवर्तन का दायित्व प्रमुख नर्तक पर होता है। इसी नर्तक का सभी अनुसरण करते हैं। शनैः-शनैः ताल और लोकगीतों की लय के साथ इस नृत्य की गति में प्रवाह आता है इसी प्रकार नाटी का क्रम चलता रहता है। लोकगीत की लय के साथ दो कदम दाहिने ओर लेकर उसके बाद कमर को क्रमानुसार आगे पीछे झुकाया जाता है एक कदम आगे की ओर एक कदम पीछे लेते हुए कन्धों को दांई ओर तथा बांई ओर झुकाते हुए यही क्रम बार-बार दोहराते हुए सभी नर्तक-नर्तकियां एक वृताकार में अपना-अपना स्थान लेते हुए नृत्य करते हैं। अन्त में वाद्य कलाकारों द्वारा लय बढ़ायी जाती है यही नाटी नृत्य की पूर्ण परिपक्व अवस्था होती है।यह नृत्य की ऐसी अवस्था होती है जब दर्शक भी लोकगीतों को सुनकर स्वाभाविक रूप से नाचने गाने को विवश हो जाते हैं।

नाटी लोकनृत्य का लोकगीतों से घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। क्योंकि लोकगीत के बोलों को सुनकर ही नर्तक भाव-भंगिमाओं का प्रदर्शन करते हैं। इस नृत्य के साथ गाये जाने वाले लोकगीतों को नाटी लोकगीत कहा जाता है। ये लोकगीत अपनी एक अलग पहचान रखते हैं। इन लोकगीतों में पर्वतीय लोगों के रहन-सहन तथा दैनिक जीवन का भावपूर्ण वर्णन होता है। नृत्य दल तो नृत्य करता ही है साथ ही पृष्ठभूमि पर पाश्र्व संगीत एंव गीत का आयोजन भी होता है अर्थात् पीछे बैठे गाने वाले लोकवादक भी नर्तकों के साथ-साथ गायन करते हैं। नाटी लोकनृत्य में प्रयुक्त लोकगीतों के साथ ढोल, नगाडा़ , शहनाई , करनाल , नरसिंगा आदि लोकवाद्य प्रयोग में लाए जाते हैं। नाटी लोकनृत्य गीतों के साथ शहनाई की संगत की जाती है। नाटी लोकनृत्य गीतों में प्रायः वीर, उत्साह , उमंग, श्रंगार आदि भावों की उत्पति होती है। लोकवादक लोकवाद्यों पर वादी - संवादी स्वरों को दर्शाते हुए वातावरण को रसीला एवं लयाश्रित बना डालते हैं। नाटी लोकनृत्य गीतों में सुख-दुःख, विरह, वेदना, श्रृंगार, धार्मिकता समाजिकता प्रणय आदि सभी प्रकार के भावों का समावेश रहता है तथा उक्त भावनाओं से व्यंजित ये लोकगीत विभिन्न तालों में निबद्ध रहते हैं। क्रमबद्ध योजना के अन्तर्गत लय (विलम्बित, मध्य तथा द्रुत) का विकास (बढ़त) करना नाटी लोकनृत्य गीतों की निजी विशेषता है। नाटी लोकनृत्य गीतों में तीनों प्रकार की लय को देखा जा सकता है। नाटी लोकनृत्य में भाग लेने वाले समस्त पात्रों को एकत्रित होकर नृत्य करना व लोकगीत गाना आवश्यक माना जाता है। अतः नाटी लोकनृत्य में प्रयुक्त लोकगीत मण्डी अंचल की अमूल्य धरोहर है। नाटी लोकनृत्य गीतों के उदाहरण निम्नवत है:-

एक घर तेरा शोझे गरांवा, दुजा घर तेरा बेणी हो,

नंदलाला ठेकेदारा दुजा घर तेरा बेणी हो।

दिले रा बड़ा मऊजी, झुरी लैंदी देखी बछेणी हो

नंदलाला ठेकेदारा, झुरी लैंदी देखी बछेणी हो।

जाछ लागी थरस हुरले, बनी ठनिए चला हो

नंदलाला ठेकेदारा बनी ठनिए चला हो।

बाटा रस्ते मिले झुरिए, बेशी ढुंढणी गल्लां हो

नंदलाला ठेकेदारा बेशी ढुढणी गल्लां हो।

सरलार्थ:-

उपरोक्त नाटी लोकनृत्य गीत में नंदलाल नामक व्यक्ति के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। जो पेशे से एक ठेकेदार है। नायिका उसके जीवन की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कहती है कि एक घर आपका शोझे नामक गांव में है तथा दूसरा घर आपका बैणी में है। तू इतना मौज मस्ती करने वाला है कि तेरी इस मौज मस्ती से ही नायिका तुझे पहचान लेती है। थरस हुरले गांव में मेला लगा हुआ है। नायक उस मेले के लिए सज-धज कर जा रहा है। नायक नायिका से कहता है कि तुम मुझे कहीं रास्ते में मिलना, जहां हम आपस में प्यार की बातें कर सकें।

भावार्थ:-

इस लोकनृत्य गीत में नायक की मौज-मस्ती भरी अदाओं का चित्रण करते हुए स्पष्ट किया गया है कि नायक के हाव-भावों को देखकर ही नायिका उसे पहचान लेती है तथा नृत्य करते-करते उसे संदेश देती है कि एकान्त में बैठकर हम आपस में प्रेमपूर्ण वार्तालाप करेंगे तथा अपने मन की कोमल आकांक्षाओं को बांटने का प्रयास करेंगे। उक्त गीत में संयोग श्रृंगार का अंकन हुआ है। उक्त नाटी लोकनृत्य गीत में ताल दादरा के समान लोकताल का वादन किया जाता है।

पार बोलो ढाँको के रीढूए तेरे, बुद्धि पुजी तुनी रे नाले

नाले बोलो हेडिया शुकरू मेटा, बुद्धि पुजी तुनी रे नाले।

हाड़ा बोलो मासा रे टुकड़े हुए, बगी बोलो खुना रे नाले

नाल़े बोलो हेड़िया शुकरू मेटा, बगी बोलो खुना रे नाले।

कुणी बोलो बेरीये घा लो भेजे, कुणी बालो बेरीये धाका

धाका बोलो हेड़िया शुकरू मेटा, कुणी बेरीये धाका।

सकी बोलो सासुए घा लो भेजे, सकी बोलो बैणिए धाका

धाका बोलो हेड़िया शुकरू मेटा, सकी बोलो बैणिए धाका।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

सरलार्थः-

उपरोक्त लोकनृत्य गीत में शुकरू नामक व्यक्ति के साथ घटी करूण घटना का वर्णन किया गया है। शुकरू नामक नायक पेशे से मेट है। उसकी दो बहने हैं तथा वे दोनों जंगल में घास लाने के लिए जाती हैं इसी दौरान उसकी सगी बहन बुद्धि को धक्का देती है। बुद्धि तुणी नामक नाले में गिर जाती है और उसकी मृत्यु हो जाती है। उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। उसके शरीर से खून पानी के नाले की तरह बहने लगता है। शुकरू मेट जंगल में शिकार करने के लिए गया होता है। वहीं पर उसे अपनी बहन की मृत्यु का समाचार मिलता है, और उसे ज्ञात होता है कि उसकी बहन बुद्धि को उसी की सगी बहन ने धक्का दिया है तो वह बहुत दुःखी होता है।

भावार्थः-

उक्त लोकनृत्य गीत में मानवीय मूल्यों के टूटने की व्यथा को व्यक्त किया गया है। भाई शुकरू अपनी बहन बुद्धि की सगी बहन द्वारा ही ढांक से धक्का देकर मारने की पीड़ा को झेल रहा है। उसे यही दुःख है कि अपनी सगी बहन ने ही यह दुष्कर्म किया है। इस गीत में मानवीय जड़ता व करूणा को एकसाथ व्यक्त किया गया है, जहां बहन क्रूर प्रकृति की है, वहीं दूसरी ओर भाई शुकरू बहन की मृत्यु हो जाने पर मानसिक यंत्रणा सहन कर रहा है। इस लोकनृत्य में करुण रस की अभिव्यक्ति हुई है।

इसे दादरा ताल के समान ताल में निबद्ध करके मध्य लय में गाया जाता है। इस लोकनृत्य में ढोल नगाड़ा, शहनाई डांगा, करनाल तथा रगसिंगा आदि लोकवाद्यों का प्रयोग किया जाता है।

उत्तमिये तेरा लगा नाचने रा, चावा तू शुणे तारा लाड़िए

फल भी ता खाये रीती-रीती रे गे, फेरी नहीं रहन्दे भावा

तू शुण तारा लाड़िये ......

केड़ा भी ता हुआ तेरा मरणा गे, शाह लोड़ी बागरे आया

तू शुण तारा लाड़िये ....

तेरी भी ता शुणी खबरे डाले भाले बाशला काऊला

तू शुण तारा लाड़िये ....

उत्तमिये तेरा लागा नाचने रा चावा तू शुण तारा लाड़िये

सरलार्थः-

उपरोक्त नाटी नृत्यगीत में नायिका के सौन्दर्य का वर्णन किया गया है इसमें मुख्य रूप से नायिका के नृत्य की प्रशंसा की गई है। नायक-नायिका को हर मौसम के फल समय पर खाने के लिए कहता है क्योंकि ऋतु गुजर जाने के बाद उस ऋतु के फल की कीमत बढ़ जाती है। कुछ समय पश्चात् नायिका की मृत्यु हो जाती है। इस पर नायक कहता है कि किस प्रकार तेरी मृत्यु हुई अर्थात तेरी सांस तेरे शरीर से हवा की भांति उड़ गई। तेरी मृत्यु की खबर सुनकर पेड़ पर बैठे पक्षी भी तेरी मृत्यु का पश्चाताप करने लगे हैं।

भावार्थ:-

नायिका की अचानक मृत्यु से नायक तो दुःखी है इसके साथ-साथ आस-पास का वातावरण व पक्षी भी उससे प्रभावित हैं। वे सभी नायिका के वियोग में तड़प रहे हैं। इस लोकनृत्य गीत में करुण रस की व्यंजना की गई है।

प्रस्तुत गीत दादरा ताल के सदृश लोकताल में निबद्ध करके मध्य लय में गाया जाता है।

टिकमें रामा पटवारीया, बंदुबस्ता लगा हो...... टिकमें रामा......

आज भी ता नापे खेचे शाडुए, कल भाले नापणी बागा हो टिकमें रामा....

जेबे भी ता लागी गल्लेरी सोठणी, छाती भाले धड़का लागा हो टिकमें रामा.....

सरलार्थ:-

उपरोक्त नाटी लोकनृत्य गीत में टिकम राम पटवारी के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। बन्दोबस्त के समय टिकम राम पटवारी एक दिन छोटे खेतों की पैमाइश करता है तथा उसके अगले कल बड़े बागों की पैमाइश करता है। जब भी वह लोगों के समक्ष पैमाइश की बात करता है तो लोगों का दिल धड़क उठता है।

भावार्थ:-

प्रस्तुत नाटी लोकनृत्य गीत में गांव के पटवारी का महत्व, उसके डर तथा प्रभाव को चित्रित किया गया है। पटवारी जब बन्दोबस्त के लिए गांव में निकलता है तो गांववासियों का हृदय द्रवित हो उठता है, उन्हें लगता है कि अब कोई परेशानी (कठिनाई) आने वाली है। यहां ग्रामीण लोगों की सहृदय्ता व सरकारी कर्मचारियों के भय को उद्घटित किया गया है।

यह लोकगीत दादरा ताल के समरुप ताल में निबद्ध है।

हुआ झुरी रा चुटना यारो, दिले दिनी धड़का छाड़ी हो

धड़का छाड़ी बोलागे, दुरा री माणुए दिले दिनी धड़का छाड़ी हो।

जाथे भी ता लुकी चांदनी यारो, तारे दिना सरग छाड़ी हो

सरग छाड़ी बोलागे दुरा री माणुए, तारे दिना सरग छाड़ी हो।

केड़ा चोड़ु मालके दिलड़ु म्हारा, केड़ी चोड़ी मजे री झुरी हो

झुरी हो मजे री बोलागे दुरा री माणुए, केड़ी चोड़ी मजे री झुरी हो।

ऐ ही जन्मे री ओऊला माणुए, होरी केड़े जन्मे पुरी हो

जन्मे पुरी बोलागे दुरा री माणुए, एही केड़े जन्मे पुरी हो।

सरलार्थ:-

उपरोक्त नाटी लोकनृत्य गीत में नायिका का नायक से रूठ जाने का वर्णन किया गया है। नायिका के रूठ जाने पर नायक कहता है कि जब से नायिका मुझसे रूठ गई है तब से मेरे दिल ने धड़कना छोड़ दिया है उसके रूठ जाने से ऐसा लग रहा

है कि मानो पर्वत ने चांदनी को छुपा लिया हो और तारों ने आसमान को छोड़ दिया हो। ईश्वर ने भी हमारा दिल कैसे तोड़ा है और मुझसे मेरी प्यारी नायिका को छीन लिया है। नायक, नायिका से प्रार्थना करता है कि ऐ नायिका ! तुम इसी जन्म में मेरे पास आ जाना, नहीं तो किस जन्म में तुम मुझसे प्यार करोगी।

भावार्थ:-

इस लोकनृत्य गीत में नायक के वियोग का मार्मिक अंकन किया गया है। नायक को लगता है कि जबसे नायिका उससे रूठी है तब से उसके हृदय की धड़कन मंद पड़ गई है। प्राकृतिक वातावरण भी विपरीत दिखाई दे रहा है। वियोग की दशा में प्राकृतिक उपकरण नायक के लिए मानसिक व्यथा को बढ़ाने वाले प्रतीत होते हैं। नायक इसी जन्म में नायिका के साथ कुछ क्षण गुजारना चाहता है ताकि उसकी तड़पन शांत हो सके। उक्त लोकगीत में वियोग श्रृंगार का मार्मिक चित्रण हुआ है।

यह नाटी लोकनृत्य गीत दादरा ताल के समरूप लोकताल में गाया जाता है।

हो सुमित्रा मिलदी ऐजे, ऐजे लारजी मोड़े हो हो सुमित्रा.........

जी वान केरे ऐजे सुमित्रा, दुहे हायड़ु जोड़े हो हो सुमित्रा.........

आसे रंगा रे शांऊले-शांऊले, मत तोपदी गोरे हो हो सुमित्रा.........

म्हारे प्यारा रे चरचे लागे, लागे मण्डी शनोरे हो हो सुमित्रा.........

सरलार्थ:-

उपरोक्त नाटी लोकनृत्य गीत में सुमित्रा एक नायिका है जिसे उसका प्रेमी लारजी नामक स्थान पर मिलने के लिए बुला रहा है। नायक अपनी नायिका अर्थात सुमित्रा को दोनों हाथ जोड़ कर तथा सब कुछ उस पर न्यौछावर करने को कहता है कि तुम मुझसे मिलने जरूर आ जाना। नायक कहता है कि मैं तो सांवले रंग का हूँ लेकिन तुम सफेद रंग की मत तलाश करना। मेरे और तुम्हारे प्यार के चर्चे मण्डी और शनोरे नामक जगह पर हो रहे हैं। हे नायिका ! तुम मुझसे मिलने लारजी नामक स्थान पर आ जाना।

भावार्थ:-

प्रस्तुत नाटी लोकनृत्य गीत में नायक नायिका से मिलने के लिए निवेदन कर रहा है। वह अपनी प्रियतमा से मिलना चाहता है। वह कहता है कि उनके प्रेम के चर्चे आस-पास के गांवों में हो रहे हैं, ऐसी स्थिती में अलग होना शोभा नहीं देता इसलिए वह मिलने के लिए आमन्त्रित कर रहा है। यहां नायक की एकनिष्ठता व समर्पण को कलात्मक ढंग से व्यक्त किया गया है। वियोग श्रंगार का अंकन किया गया है। इस नाटी लोकनृत्य गीत में दादरा ताल के समान छः मात्रा की लोकताल का द्रुत लय में वादन किया जाता है।

संदर्भ

1. ब्रज की कलाओं का इतिहास, प्रभुदयाल मित्तल, पृष्ठ-36,37।
2. नाट्यशास्त्र (भरतमुनि प्रणीतं), श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री ,पृष्ठ-135-1984।
3. मालविकाग्निमित्रम् , डा. रमाशंकर पाण्डेय, पृष्ठ-12।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 09, Issue 04, December 2022
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2022

4. श्री मदवाल्मीकि रामायण (अयोध्याकाण्ड पूर्वार्द्ध), चतुर्वेदी द्वाराकाप्रसाद शर्मा, पृष्ठ-33।
5. भारतीय संगीत वाद्य, डा. लालमणि मिश्र, पृष्ठ-5।
6. संगीत परिजातः अहोवल पण्डित (तृतीय संस्करण) पृष्ठ-11 (भाष्यकार कलिंदं)
7. राजतंरागिणि,पाण्डेय रामतेज शास्त्री ,पृष्ठ-229।
8. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृति भुमिका , डा. राम जी उपाध्याय ,पृष्ठ-908।
9. ऋग्वेदः- भीमदेवः अमर नाथः के० एस० राम स्वामि शास्त्री पीताम्वरदत पृष्ठ-661
10. नाटयाशास्त्रम्-भरतमुनि प्रणीतं-व्याख्याकार श्री बाबू लाल शुक्ल शास्त्री, पृष्ठ-133।
11. ब्रज की कलाओं का इतिहास, प्रभुदयाल मित्तल, पृष्ठ-42।
12. कथक प्रसंग, रश्मि वाजपेयी पृष्ठ-36
13. संगीतबोध, डा. शरचन्द्र श्रीधर पराजेयं पृष्ठ-66
14. सिद्धांन्त कौमदी, पृष्ठ-417, वैंकटेश्वर प्रैस मुम्बई
15. ऋग्वेद 3/53/12
16. डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी,जनपद, लोक साहित्य का अध्ययन, अंक अक्तूबर, 1952 पृष्ठ-65
17. भारतीय लोक साहित्य-श्याम परमार, राजकमल दिल्ली 1954 पृष्ठ-10
18. डा. वासुदेव शरण अग्रवाल-सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति विशेषांक सम्वत् 2010 पृष्ठ-65
19. लोक साहित्य की भूमिका-डा. कृष्णदेव उपाध्याय पृष्ठ-28
20. श्री मुकन्द लाल श्रीवास्तव, ज्ञान शब्द कोश पृष्ठ-712
21. डा. कृष्ण देव उपाध्याय , हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास पृष्ठ-4
22. पूर्णिमा श्रीवास्तव , लोकगीतों में समाज पृष्ठ-9
23. डा. श्री राम शर्मा , लोक साहित्य सिद्धान्त और प्रयोग पृष्ठ-3
24. डा. सत्येन्द्र, मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्विक अध्ययन पृष्ठ-54
25. मृदुला बिहारी, लोकनृत्य हमारी जीवन परम्परा , पत्रिका आजकल , जून, 1982 पृष्ठ-15
26. डा. यादवेन्द्र शर्मा, हि.प्र. के ज़िला मण्डी व बिलासपुर के लोकगीतों का साँगीतिक पक्ष एक सघन अध्ययन पृ612
27. डा. चमन वर्मा, मंडियाल़ी लोक संस्कृति व सांगीतिक विधों का आलोचनात्मक अध्ययन पृष्ठ-266
28. हरिश्चन्द्र उपेली , भारतीय जन जातियां, जीवन कला पृष्ठ-145
29. हरिश्चन्द्र उपेली , भारतीय जन जातियां, जीवन कला, पृष्ठ-145।
30. ओम चन्द हाण्डा , पश्चिम हिमालय की लोक कलाएं, पृष्ठ-117-118।
31. लक्ष्मी नारायण गर्ग , संगीत, लोकसंगीत अंक पृष्ठ-43-44
32. केशव आनन्द , हिमाचल का लोक संगीत पृष्ठ-172
33. आचार्य सूर्यामणि शास्त्री, भारतीय नृत्य परम्परा एवं शैली पत्रिका ‘संगीत‘, अप्रैल 1997 पृष्ठ-34-35।
34. कैलाश चन्द्र वृहस्पति , संगीत चिंतामणि ,पृष्ठ-55-56।
35. डा. चमन लाल वर्मा, मण्डियाल़ी लोक संस्कृति व सांगीतिक विधाओं का आलोचनात्मक अध्ययन, पृष्ठ-85-86।